शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 9
Issue 2
15 July 2018

भारत में राजकीय प्रयोजनों के भाषा की स्थिति और राजभाषा हिन्दी के प्रयोग की विकास यात्रा

बीज शब्द :

राजभाषा, हिन्दी, लोकभाषा, हिन्दी का इतिहास, साम्राज्यवाद और हिन्दी।

शासक जाति की भाषा ही प्राय: वहाँ की राजभाषा के पद पर विभूषित होती है। हिंदी के साथ दुर्भाग्य यह रहा कि यह स्वभाव से लोक भाषा रही है और स्वतंत्र्योत्तर भारत में लंबे संघर्ष के बाद राजभाषा के रूप में किसी प्रकार से संविधान में स्थान प्राप्त कर सकी। विश्व क्षितिज पर प्रयोगकर्ताओं की संख्या के आधार पर यह लोक के समीप होने के कारण दुनिया में प्रथम पाँच में स्थान पा रही है किंतु राजनम में हिंदी की विकासयात्रा अभी भी असंतोषजनक है। यह शोध आलेख राजभाषा के रूप में हिंदी की विकासयात्रा का एक अन्वेषणात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

*****

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह
प्रोफेसर हिन्दी विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

भारत में राजकीय प्रयोजनों के भाषा की स्थिति और राजभाषा हिन्दी के प्रयोग की विकास यात्रा

भारत में राजभाषा की ऐतिहासिक भूमिका और इतिहास:

किसी समय संस्कृत शास्त्र और लोक की भाषा रही। महात्मा बुद्ध के समय पल्लि गाँव की भाषा पालि न केवल राजभाषा अपितु उस समय के शास्त्र और लोक की भी भाषा बनी और स्वीकृति हुई। ऐसा इसलिए हो सका क्योंकि उस समय की धर्म व्यवस्था और राज्य व्यवस्था लोक सम्पृक्त थी, लोक में उसका प्रभाव था। कालान्तर में बड़े राज्य उस रूप से प्रभावी स्थिति में नहीं रहे कि उनका भारी भरकम तंत्र हो जो जनसामान्य के लिए खुला हो। ध्यातव्य है कि सम्राट हर्षवर्धन के बाद देश की राजनीतिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हुयी और सम्पूर्ण देश को राजनैतिक एकसूत्रता में बांधने वाली व्यवस्था का अभाव उपस्थित हुआ। दूसरे परंपरागत दृष्टि से भी भारत में समस्त समाज के गतिविधि संचालन में राज्य की केन्द्रीय भूमिका नहीं थी। इसलिए राज्य सशक्त थे किन्तु इतने बड़े कि न ही उनके तंत्र के संचालन के लिए अलग से विस्तृत भाषा व्यवस्था की संरचना खड़ी की जाए। उस समय भारत में जो शासक था वह अपना कार्य अपनी भाषा में करता था। फलत: राजभाषा का संबंध जनसामान्य से न था, उसकी व्याप्ति केवल राज दरबारों तक सीमित थी। उन शासकों का तंत्र बहुत बड़ा न होने के कारण उसका असर जनता पर और समाज पर न पड़ा। फलत: मुगल शासन में भी ऐसे कुछ खास फरियादियों की बात छोड़ दें तो अधिकांश को राजन्य से कोई प्रत्यक्ष संबंध भी नहीं बनता था। इसीलिए तो समाज के प्रबुद्ध संतों ने कहा- *कोई नृप होहिं हमहीं का हानि (तुलसी) और संतन को कहाँ सीकरी सों काम।* (कुंभनदास)

प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि जो शासक थे उनकी भाषा ही वहाँ की राजभाषा रही। किसी भी विकसित सभ्यता में राज्य और समाज की स्वतंत्र सत्ता होती है। ये दोनो सत्तायें एक दूसरे को परस्पर काटती और समन्वय करती हुई चलती हैं। ये कभी एक दूसरे का प्रतिपक्ष बनती है तो कभी एक दूसरे की सहधर्मिणी। इनके बीच द्वन्द्व एवं समन्वय का यह चक्र निरन्तर चलता रहता है। यही कारण है कि राजभाषा कभी लोकभाषा से भिन्न होती है तो कभी राजभाषा और लोकभाषा एक होती हैं। किसी भी सभ्यता के लिए आत्मविकास की स्वाभाविक स्थिति तभी बनती है जब राजभाषा और लोकभाषा एक हो।

हिन्दी की सरलता, देश के अधिकांश जन समुदाय में बोलचाल का माध्यम होना और सर्वसामान्य लोकाभिव्यक्ति की क्षमता ने विदेशियों को भी इस भाषा के प्रयोग को सुलभ बनाया। एडवर्ड टेरी ने कहा था कि ''हिन्दोस्तान देश की बोलचाल की भाषा अरबी-फारसी जबानों से बहुत मिलती जुलती है पर बोलनें में ज्यादा सुखकर और आसान है। इसमें काफी रवानगी है और थोडे शब्दों में बहुत कुछ कहा जा सकता है। लोग हमारी ही तरह बायें से दायें लिखते हैं।[1]'' फ्रेडेरिक पिनकाट ने हिन्दी को लिंगुआ फ्रेंका बताते हुए सन 1888 में श्रीधर पाठक को लिखे पत्र में उल्लेख किया था कि बीस साल पहले वह एकमात्र यूरोपियन था जिसने सरकार पर हिन्दी के बारे में जोर डाला और दस साल बाद यह नियम बनवानें मे सफल रहा कि भारत जाने वाले अंग्रेजों को हिन्दी की परीक्षा पास करना अनिवार्य है। संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान हेनरी टामस कोल्ब्रुक ने एक स्थान पर लिखा था कि ''जिस भाषा का व्यवहार भारत के प्रत्येक प्रान्त के लोग करते हैं, जो पढे लिखे तथा अनपढ दोनों की साधारण बोलचाल की भाषा है, और जिसको प्रत्येक गांव में थोडे-बहुत लोग अवश्य समझ लेते हैं, उसी का यथार्थ नाम हिन्दी है।[2]'' उन्नीसवीं शताब्दी के पहले दशक में दिल्ली के रेजीडेंट सी.टी. मेटकाफ ने अपने दिनांक 29.8.1806 ई. के पत्र में लिखा: ''भारत के जिस भाग में मुझे काम करना पडा है, मुझे हर जगह ऐसे लोग मिले हैं जो हिन्दुस्तानी बोल सकते हैं। हिन्दुस्तानी एक ऐसी जबान है, जो आमतौर पर उपयोगी साबित होती है और मेरी समझ में संसार की किसी भी भाषा से उसका व्यवहार बहुत बडे पैमाने पर होता है।'' लगभग ऐसे ही विचार मद्रास के लेफ्टीनेंट टामस रोबक (1781-1819) ने रखे थे।

यह बात स्वत: प्रमाणित होती है कि उस समय में अंग्रेजी राज्यव्यवस्था अपने को अधिक सशक्त कर रही थी जिसके कारण उसमें स्थायित्व लाने के लिए जनसहभागिता की अनिवार्यता बन रही थी। उस समय के परिवेश में लोक भाषा के प्रति सद्भावनापूर्ण संवाद ही जनसहभागिता को सुनिश्चित कर सकती थी केन्द्रीकृत और सशक्त होती जा रही परिस्थिति में लोकभाषा हिन्दी के प्रति सहानुभूतिपूर्ण नजरिया अंग्रेजी शासन के लिए अनिवार्य बनता जा रहा था।

इन दबाव की वजह से खड़ी बोली हिन्दी को देश की सम्पर्क भाषा के रूप में सर्वसामान्य स्वीकृति होने के कारण

---

1. भाटिया, डॉ0 कैलाश चन्द्र, साहित्य भवन प्रा0 लि0, 2006 पृष्ठ सं0 14, हिन्दी भाषा का प्रयोजनमूलक स्वरूप
2. भाटिया, डॉ0 कैलाश चन्द्र, साहित्य भवन प्रा0 लि0, 2006 प्रष्ठ सं0 14, हिन्दी भाषा का प्रयोजनमूलक स्वरूप

अंग्रेजी सरकार ने अपने शासकीय प्रयोजनों के लिए स्वीकार किया। उस समय यह अनुभव किया गया कि शासन सत्ता में जन की सहभागिता और सामान्य संवाद के लिए कोई एक सर्व सामान्य भाषा हो सकती थी तो वह हिन्दी-हिन्दुस्तानी हो सकती थी।

चार मई 1800 ई0 को कलकत्ता में अंग्रेजी शासन के मार्किस वेलेजली द्वारा फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना की गयी। एक नवम्बर 1800 ई0 को इस कालेज में जॉन गिलक्राइस्ट की नियुक्ति की गयी जो 1804 ई0 तक यहाँ कार्यरत रहे। इस कालेज की स्थापना इस उद्देश्य से की गयी थी कि अंग्रेजी शासन के सिविल सर्वेन्टस को भारतीय भाषा का सामान्य ज्ञान सम्भव हो सके। राजभाषा हिन्दी के स्वरूप, विकास में फोर्ट विलियम कालेज की भूमिका महत्वपूर्ण रही। इस कालेज में दो भाषा मुन्शी, पण्डित सदल मिश्र और लल्लू लाल नियुक्त किये गये। इनसे खड़ी बोली हिन्दी में पुस्तकें भी तैयार करायी गयी। एक वर्ष पश्चात सन् 1801 में सिविल सर्वेन्ट्स की नियुक्ति के लिए पद से सम्बन्धित प्रयोग की जाने वाली भाषा का ज्ञान आवश्यक कर दिया गया। सन् 1803 ई0 में विनियमों के हिन्दुस्तानी में अनुवाद की व्यवस्था सुनिश्चित की गयी। डंकन फोर्ब्स ने एक 'हिन्दी मैनुअल' दो भागों में लंदन से सन् 1854 ई0 में तथा एक कोश हिन्दी-अंग्रेजी तथा अंग्रेजी-हिन्दी, दो खण्डों में सन् 1848 में प्रकाशित किया। फ्रेडरिक जानसोर ने एक पुस्तक 'नोट्स ऑफ इण्यिन अफेयर्स' (1837 ई0) ने हिन्दुस्तानी के पक्ष में अपना सबल मत प्रस्तुत किया।

अंग्रेजी शासन में हिन्दी के प्रयोग को लेकर बड़ा द्वन्द्व था। पूरी दुनिया में अपनी विशिष्टता को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने वाली अंग्रेजी जाति का बहुत बड़ा हिस्सा किसी भी कीमत पर हिन्दी के पक्ष में नहीं था। उंगली पर गिने जाने वाले कुछ अंग्रेजी अधिकारियों को छोड़कर जो सच्चे अर्थों में हिन्दुस्तानी के पक्षधर थे, के अलावा हिन्दुस्तानी के पक्षधर केवल अपनी प्रभुसत्ता को स्थायी बनाये रखने के लिए हिन्दुस्तानी की जितनी आवश्यकता थी उतने के ही स्वीकार करने के पक्षधर अंग्रेज थे। लार्ड मैकाले के नेतृत्व में पूरी ब्रिटिश सरकार ने औपनिवेशिक विचारों और मूल्यों की स्थापना के लिए अंग्रेजी की प्रभुसत्ता स्थापित की और प्रकारान्तर से भारतीय संस्कृति की जड़ों पर चोट पहुँचाते हुए आम भारतीयों के हृदय में अपनी संस्कृति और भाषा के प्रति व्यापक स्तर पर हीनता बोध उत्पन्न करने के लिए अंग्रेजी भाषा और उसकी शिक्षा को माध्यम बनाया। अंग्रेजों की इस कुटिल नीति के परिणामस्वरूप कालान्तर में भारतीयों का एक बड़ा समूह खड़ा हुआ जो अंग्रेजी राज-काज से अपने को जोड़ता रहा और अंग्रेजी का पक्षधर बना रहा। अंग्रेजी शासन की उपरोक्त नीतियों के बावजूद 1951 तक अंग्रेजी का प्रयोग मात्र एक प्रतिशत तक रहा। किन्तु इसके बावजूद हिन्दी राजकीय प्रयोजनों की भाषा न बन सकी। इस परिणाम तक पहुंचनें में जितनी भूमिका अंग्रेजों की थी कहीं उससे ज्यादा भूमिका अंग्रेजीदां भारतीयों की थी। गुलामी मानसिकता की सबसे बड़ी पहचान यह होती है कि वह अपने आचरण व्यवहार में अपने राजा या आश्रयदाताओं की नकल करता है। कुछ इसी प्रवृत्ति का परिणाम रहा कि स्वतंत्र भारत के सविंधान में हिन्दी राजभाषा का स्थान पाकर भी अपनी सात दशकों की यात्रा में न तो पूर्णतया राजकीय प्रयोजनों की भाषा बन सकी और न ही लोकतंत्र की शक्ति को लोक के हाथों में सौंपने में सक्षम हो सकी। देश का विभाजन हुआ- हिन्दू मुसलमान के नाम पर। महत्वपूर्ण विषय यह है स्वातंत्रयोत्तर भारत में जो विवाद हिन्दी और उर्दू को लेकर होने की संभावना थी वह चन्द अंग्रेजीदां शासनकर्ताओं की विशिष्टतावादी कुटिल नीति के कारण अंग्रेजी से लड़-लड़ कर हिन्दी परास्त होती रही। शासन मे विवाद अंग्रेजी और हिन्दी का सदैव बना रहा तथा अंग्रेजी का यथास्थितिवादी वर्चस्व अभी तक कायम है। निर्णय का संकल्प जब कमजोर हो तो विकल्पों की आवश्यकता बार-बार बनती है। यही कारण है कि महामहिम राष्ट्रपति के आदेशों, राजभाषा विविध आयोगों के गठन और सुझावों के बावजूद हिन्दी राजभाषा के रूप में अल्पविकसित और कुंठित अवस्था में है। हिन्दी की लोकभाषा और जपसम्पर्क भाषा के रूप में सबल उपस्थिति का थोड़ा-बहुत दबाव है कि हिन्दी राजकीय प्रयोजनों में थोड़ी-बहुत उपयोग में आ रही है अन्यथा इसकी भी वही स्थिति आज होती जैसी न्यायालयों में हिन्दी की स्थिति है।

भारत के कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग की विकास यात्राः

आजादी मिलने के बाद सन् 1946 ई0 में राष्ट्रीय कांग्रेस, मुस्लिम लीग के सदस्यों तथा कछ अन्य स्वतंत्र व्यक्तियों को मिलाकर संविधान सभा का गठन किया गया। डा0 राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में गठित इस संविधान सभा की नियम समिति ने प्रारम्भिक दिनों में यह निर्णय ले लिया कि सभा के कामकाज की भाषा हिन्दुस्तानी या अंग्रेजी होगी, पर कोई भी सदस्य अध्यक्ष की अनुमति से अपनी मात्रभाषा में भाषण दे सकेगा। 14 जुलाई 1947 ई0 को संविधान सभा के चौथे सत्र के दूसरे दिन ही कामकाज की भाषा 'हिन्दुस्तानी' के नाम परिवर्तन का निर्णय लिया गया। इस सम्बन्ध में यह संशोधन प्रस्तुत किया गया कि संविधान में

हिन्दुस्तानी के स्थान पर इस भाषा के लिए हिन्दी शब्द रखा जाए। इस विषय पर हुए मतदान में हिन्दी शब्द के पक्ष में 63 वोट पड़े थे और हिन्दुस्तानी के पक्ष में 32 और इसी प्रकार देवनागरी के सन्दर्भ में हुए मतदान के पक्ष में 63 और विपक्ष में 18 वोट पड़े। फरवरी 1948 में प्रस्तुत किये गये संविधान के प्रारूप में केवल इतना ही उल्लेख था कि संसद की भाषा अंग्रेजी या हिन्दी होगी। 19 नवम्बर 1948 ई0 को स्टीयरिंग कमेटी में यह निर्णय लिया गया कि संविधान अंग्रेजी के साथ हिन्दी में भी तैयार किया जाए। 19 सितम्बर 1949 को अनेक वाद-विवादों के बाद देश के स्वातंत्र्य समर को मुखरित करने वाली राष्ट्रभाषा हिन्दी भारत के संविधान में स्थान पा सकी और देश की राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित होने का गौरव पा सकी। अन्ततः भारतीय संविधान के निर्माताओं ने 343 से 351 अनुच्छेद तक हिन्दी के लिए उपबन्ध निर्धारित किये।

स्वतंत्र देश के निर्माताओं ने हिन्दी को संविधान में स्थान दिलाया फिर भी सात दशकों की यात्रा के बावजूद हिन्दी वह गौरव न पा सकी जो अपेक्षित था। स्वतंत्र भारत के सत्ता वर्ग का दृढ संकल्प देश को इससे मुक्ति दिला सकता था, किन्तु आधिपत्य की मूल भावना स्वातंत्र्योत्तर भारत के स्थानापन्न शासकों में यथावत् बनी रही। फलतः विशिष्ट बने रहना और जनता से दूरी बनाये रहने के मोह ने न केवल अपनी भाषा को अपनाने के संकल्प का क्षरण करता रहा, वरन् शासकीय प्रयोजनों से हिन्दी को राजभाषा के पद पर अधिष्ठित हो जाने के बावजूद उसे व्यावहारिक दृष्टि से पर्याप्त उपेक्षित रखा।

राजभाषा हिन्दी की प्रवृत्तिः

अंग्रेजों ने अपने सत्ता संचालन को स्थायी बनाने के लिए लोकतंत्र के नाम पर शासकीय प्रयोजनों के लिए स्थानीय लोगों को भागीदार बनाया। सत्ता संचालन का उनका तंत्र और कार्यसंस्कृति उनका अपना था, स्वंयमेव विकसित किया हुआ। शासकीय प्रयोजनों से संबंधित राजभाषा की सबसे खास बात यह होती है कि यह कार्यसंस्कृति और तंत्र सापेक्ष विकसित और अनुकूलित होती है। भाषा के अनुसार तंत्र नहीं ढलता अपितु तंत्र के सापेक्ष भाषा ढलती है। अंग्रेजी राज में भी यही हुआ। अंग्रेजों ने अपनी राजभाषा को अपने तंत्र के अनुकूल खड़ा किया। उसे अपने नियमों-परिनियमों के अनुसार समृद्ध बनाया।

वर्तमान में विकसित राजकीय संचालन का तंत्र पूर्णतया अंग्रेजों द्वारा विकसित विदेशी तंत्र था। अपने उद्देश्यों और भावना के अनुसार अंग्रेजों ने अपना तंत्र विकसित किया था। जहाँ खड़ी बोली हिन्दी की आवश्यकता थी वहाँ उन्होंने अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद किया अथवा कराया था। यह प्रवृत्ति शासकीय हिन्दी की आजतक बनी हुयी है। यही कारण है कि राजभाषा हिन्दी का स्वाभाविक विकास होना चाहिए था उसकी जगह पर हिन्दी आज भी अंग्रेजी के अनुवादों पर आश्रित कृत्रिम हिन्दी है। यह बडा दुर्भाग्यपूर्ण है कि स्वतंत्र भारत का विदेशी तंत्र और विदेशी भाषा आज भी राजभाषा हिन्दी के स्वाभाविक विकास में बड़ी बाधा है। अनुवाद के आश्रय के कारण राजभाषा हिन्दी का कृत्रिम स्वरूप आज भी जनसामान्य हिन्दी भाषा भाषियों के बीच दुर्बोध बना हुआ है। सामान्य भाषा में शब्द भाषिक इकाई के रूप में काम करते हैं जबकि शासकीय हिन्दी में परिभाषिक शब्द और पदबन्ध भाषिक इकाई के रूप में कार्य करते हैं। राजभाषा हिन्दी प्रयुक्तियों की एक ऐसी निर्मित भाषा है जो स्वाभाविकता से परे है। यह राजकीय हिन्दी ऐसी है मानों अंग्रेजी जानने वालों के लिए प्रस्तुत अनुदित रूप है, हिन्दी जानने वालों के लिए नही।

स्वातंत्र्योत्तर शासन की विशेषता यह रही कि राज्य तो देशी लोगों के हाथ आया किन्तु शासन संचालन का तंत्र वही पुराना रहा। फलतः राजभाषा अंग्रेजी का तंत्र चलता रहा। जनता के अपेक्षित दबाव के प्रभावस्वरूप राजभाषा के संदर्भ में बार-बार जो संकल्प लिया गया, राजभाषा हिन्दी के स्वीकार्यता की दुहराया गया, इससे राजभाषा हिन्दी के पक्ष में स्थितियां बनीं, किन्तु इसे आधे अधूरे मन से ही स्वीकार किया गया।

इसका परिणाम यह रहा कि राजभाषा हिन्दी का शासकीय प्रयोजनों के उपयुक्त जो भाषिक स्वरूप निर्मित हुआ वह पूर्णतः अनुवाद पर आधारित रहा। अतः यदि यह कहे कि शासन संचालन में शासकीय प्रयोजनों की हिन्दी स्वतः स्फूर्त हिन्दी न होकर एक अपने स्वभाव के प्रतिकूल एक कृत्रिम हिन्दी है तो यह गलत न होगा। प्रवृत्ति की दृष्टि से बेमेल भाषिक प्रयोग राजकाज की हिन्दी में हो रहें हैं। शासकीय पत्र व्यवहार की हिन्दी सिखाने वाली पुस्तकें और शिक्षक आज भी कामकाजी हिन्दी में तथाकथित दुरूह पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग और अंग्रेजी पदों के हिन्दी उल्था को कंठस्थ करने की हिदायत देते हैं। राजभाषा हिन्दी में लम्बे शुष्क पदबंधों के प्रयोगों की बहुतायत है। इन अनूदित हिन्दी के कारण शासकीय प्रयोजन के हिन्दी की इकाई मूलतः शब्द न होकर, पदबंध हैं। इन पदबंधों कों तोड़कर लिखना अभिधेयार्थ तक पहुचनें में बड़ी बाधा उत्पन्न करते हैं।

जहाँ प्रशासनिक साहित्य के राजभाषा हिन्दी में प्रकाशित या लेखन की अनिवार्यता है वहाँ तो हिन्दी का प्रयोग होता है

किन्तु जहाँ अंशमात्र भी ऐच्छिक प्रयोग की स्वतंत्रता है वहाँ अंग्रेजी मानसिकता की स्वेच्छाचारिता दिखती है। उन्नीसवीं सदी के उत्तर में कम्प्यूटरों की बढती संरचनात्मक सुविधा ने प्राथमिक चरण में अंग्रेजी प्रयोग की लाचारी का वातावरण बनाया। विकास के अगले चरण मे 16 बिट के यूनीकोड़ और देवनागरी मे लेखन सुविधा से (इनपुट टूल्स) से हिन्दी में सरकारी पत्र-व्यवहार के प्रारूप को हिन्दी में लिखना सरल हुआ और सी-डैक और अन्य संस्थाओं के सद्प्रयासों से अनुवाद की सुविधाएं साकार हुईं। किन्तु प्रयोग के प्रतिशत आकडों को देखें तो अभी भी स्थिति निराशाजनक है। हिन्दी अभी भी दिल्ली से कोसों दूर है।

राजभाषा हिन्दी की वर्तमान स्थितिः-

राजभाषा के संदर्भ में यह कहा गया था कि कार्यालय शत प्रतिशत अपना कार्य हिन्दी में सम्पादित करेंगे किन्तु उनके प्रयोगों को निम्न सारणी से देखा जा सकता है।

राजभाषा 1976 की नियमावली के अनुसार 'क' और 'ख' वर्ग के क्षेत्रों में 100 प्रतिशत हिन्दी में पत्राचार होना आवश्यक है, 'ग' वर्ग के क्षेत्रों में 85 प्रतिशत। किन्तु मानव संसाधन मंत्रालय एवं समिति के सदस्य कार्यालयों की कार्यान्वयन की निम्न प्रगति रिपोर्ट (दिनांक 31 दिसम्बर, 2016 को समाप्त हुई छमाही की स्थिति के आधार पर) बडी हतोत्साहजनित है।

हिन्दी पत्राचार की स्थिति

क्र. सं.	कार्यालय का नाम	हिन्दी पत्रचार का प्रतिशत		
		'क' क्षेत्र	'ख' क्षेत्र	'ग' क्षेत्र
01	मानव संसाधन विकास मंत्रालय	52.30%	52.40%	41.80%
02	प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय	65%	60%	40%
03	केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय	100%	100%	95%
04	विश्वविद्यालय अनुदान आयोग	21.03%	18.03%	28.76%
05	राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान	71%	67%	66%
06	वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग	100%	100%	100%
07	भारतीय भाषा संस्थान	4.08%	7.08%	22.31%
08	महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय	100%	100%	09%
09	केन्द्रीय विद्यालय संगठन	87.98%	83.27%	76.40%
10	नवोदय विद्यालय समिति	80.76%	83%	80.69%
11	केन्द्रीय माधयमिक शिक्षा बोर्ड	68.88%	67.80%	44.30%
12	अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद	48%	21%	13.5%
13	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद	62.52%	55.60%	36.65%
14	राष्ट्रीय बाल भवन	85.76%	86.04%	84.01%
15	केन्द्रीय हिन्दी संस्थान	99.9%	99%	98%

उक्त राजभाषा अधिनियम की धारा का उल्लंघन दण्डनीय अपराध है। केन्द्र सरकार के अधिकांश विभागों एवं संस्थानों के हिन्दी उपयोग की स्थिति को निम्न सारणी से समझा जा सकता है।

राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन

क्र. सं.	कार्यालय का नाम	राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) के अनुपालन की स्थिति		
		हिन्दी में जारी	द्वभाषी में जारी	अंग्रेजी में जारी
01	मानव संसाधन विकास मंत्रालय	6469	–	–
02	प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय	–	34	–
03	केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय	1206	–	–
04	विश्वविद्यालय अनुदान आयोग	5106	–	45166
05	राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान	–	100 :	–
06	वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग	100 :	–	–
07	भारतीय भाषा संस्थान	176	211	4419
08	महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय	–	2659	–
09	केन्द्रीय विद्यालय संगठन	–	2485	–
10	नवोदय विद्यालय समिति	7198		–
11	केन्द्रीय माधयमिक शिक्षा बोर्ड	–	470	–
12	अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद	135	190	325
13	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद	–	6632	–
14	राष्ट्रीय बाल भवन	–	316	–
15	केन्द्रीय हिन्दी संस्थान	3078	–	03

राजभाषा अधिनियम 1976 के नियम 6 के 2 में प्राविधान किया गया है कि 'क' और 'ख' क्षेत्र में हिन्दी के पत्राचार का उत्तर हिन्दी में दिया जाएगा। रबर स्टाम्प साइनबोर्ड का द्विभाशी होना आवश्यक है जिसमें हिन्दी के अक्षर अंग्रेजी के अक्षर से मोटे होंगे, पहले हिन्दी में फिर अंग्रेजी में लिखा जाएगा। इसकी

रबड की मोहर, नामपट्ट, साइनबोर्ड की द्विभाषिकता की स्थिति

क्र. सं.	कार्यालय का नाम	रबड़ की मोहर			नामपट्ट			साइनबोर्ड		
		हिन्दी में	अंग्रेजी में	द्विभाषी में	हिन्दी में	अंग्रेजी में	द्विभाषी में	हिन्दी में	अंग्रेजी में	द्विभाषी में
01	मानव संसाधन विकास मंत्रालय	–	–	254	–	–	254	–	–	6
02	प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय	–	–	39	–	–	20	–	–	4
03	केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय	–	–	75	–	–	28	–	–	5
04	विश्वविद्यालय अनुदान आयोग	10	–	197	–	–	32	–	–	4
05	राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान	–	–	100	–	–	100	–	–	100
06	वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग	8	6	21	1	–	1	–	–	10
07	भारतीय भाषा संस्थान	सभी द्विभाषी में लागू हैं								
08	महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय	–	–	132	–	–	–	109	–	22
09	केन्द्रीय विद्यालय संगठन	27	–	57	6	–	27	4	–	2
10	नवोदय विद्यालय समिति	–	–	40	–	–	34	–	–	39
11	केन्द्रीय माधयमिक शिक्षा बोर्ड	74	–	66	25	–	43	11	–	32
12	अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद	–	–	58	–	–	58	–	–	58
13	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद	–	–	100	–	–	100	–	–	100
14	राष्ट्रीय बाल भवन	–	–	33	–	–	134	–	–	16
15	केन्द्रीय हिन्दी संस्थान	140	28	29	26	–	41	01	–	09

भी प्रगति निम्न सारणी से देखी जा सकती है

उक्त अधिनियम के अनुसार सरकार के विभागों एवं संस्थानों की बैठक अनिवार्य है जिसकी कार्यालय प्रमुख अध्यक्षता करेगें।

उपरोक्त स्थिति के अवलोकन से यह बात प्रत्यक्ष होती है कि 'क' और 'ख' क्षेत्र ने सर्वाधिक हिन्दी की उपेक्षा की है और वह भी मत्रांलयों मे अधिक। जबकि 'ग' क्षेत्र के कार्य अधिक उत्साहजनक रहे हैं।

◆◆◆

An honest warning to research contributors

The writing of research papers is a very common phenomenon in the academic world. But now-a-days this is done without giving due care to the norms and ethics accepted for writing research papers. Even a small mistake spoils the reputation of the concerned person. We come across several stories of the violation of accepted norms. With the help of Electronic Editing, it is very common to cut ,copy and paste in Research article / thesis formation without giving a reference of the original work. We should always keep in mind that it is not a fare practice. While reviewing, sometimes we come across such malpractices. Such stories suggest that research scholars must be very honest and sincere in their work and must give proper attribution in case they quote any content from any original work.

Editor